बाढ

गुआहाटी जंक्शन के प्लेटफार्म नम्बर आठ पर इस परिवार की पूरी गृहस्थी बसी हुई थी. जिसमे मात्र दो जन थे. पति और पत्नी। अनुमानतः ये बिहार के रहने वाले थे। पता नही बिहार और यू पी के मजदूरों को बड़े शहरों का कौन सा आकर्षण आज तक अपनी तरफ खींचता रहा है!गॉवों मे इन्हे ऐसी कौन सी परेशानी है!अपना सबकुछ बेच बाच कर ये पसिन्जर गाड़ियों का टिकट कटाते हैं और अपना झन्ड कमन्डल सम्हाले बढ चलते हैं शहरों की ओर। इन शहरों मे या तो ये गल्लों की बोरियॉ ढोते हैं या फिर रिक्सा टानते हैं. और अगर कोई काम न मिला. तो दे दो राम दिला दो राम देने वाला है भगवान. गा गाकर भीख मॉगते हैं। यहॉ वहॉ स्टेशनो पर. फूटपाथों पर. पुलियों के नीचे गुदड़ियों. बोरियों मे अपनी राते बिताते है. या फिर किसी उपेक्षित इलाके मे इधर उधर से इकट्ठी की गई लकड़ियों. पतरों. टीनों. बोरियों. या चटाईयों से घेर घार कर झुग्गियॉ बना लेते हैं। इस नारकीय जीवन मे गर्मी ठंढ. बरसात तो आती जाती रहती ही है. शहरी भी इन्हे बड़ी हिकारत की नजरों से देखते हैं। मुम्बई. दिल्ली. मद्रास. कोलकाता. गुआहाटी. चंडीगढ इन भईयों से खचा खच भरा पड़ा है. फिर भी इनके शहरों मे आने की बाढ आज तक न रूकी है।

गुआहाटी जंक्शन पर मेरी एक ट्रेन छूट गई थी। दूसरी के आने मे सात घंटे की देरी थी। गुआहाटी मे मै स्वयम विदेशी था। अपना सूटकेस लॉकरूम मे जमा करवा कर मै स्टेशन से बाहर निकला। यूँ ही इधर उधर शहर मे घूमता रहा। गर्मियों के दिन थे. चारों ओर लू चल रही थी। मै वापस आ गया। प्लेटफॉर्म नम्बर एक के बुक स्टाल से एक फिल्मी कलियॉ खरीदकर मै प्लेटफॉर्म नम्बर आठ पर आ गया. जिसके अन्तिम छोर पर एक बेंच खाली थी। अचानक मेरी नजर एक गृहस्थी पर पड़ी. जो ठीक मेरे सामने स्टेशन के नलके के समीप थी। दाहिनी तरफ छत से बाबा आदम के जमाने की एक काली सी घड़ी लटकी पड़ी थी. जो मकड़जालियों और धूलों से अॅटी पड़ी थी और न जाने कितने वर्षो से साढे छ बजाये जा रही थी। पता नही सुबह के या शाम के!वो भगवान ही जाने। इस गृहस्थी मे दो जन थे पति और पत्नी। ये टूटे पिचके ढक्कनदार चौकोर कनस्तरों से घेर घार कर प्लेटफॉर्म का एक छोटा सा हिस्सा कबजियाये हुए थे। इस घेरे के फर्श पर बोरियॉ बिछी हुई थीं। एक ओर दो कनस्तरों के बीच का फासला कुछ ज्यादे था. जो इनके घर का फाटक था। इसे वो फाकट कहते थे। इसी फाकट से होकर वो अपने अहाते मे आते जाते थे। उनके पास एक कब्जेदार बक्सा भी था. बड़े बड़े फूलों के छापों वाला। फूल घिस घास के मिट चले थे। ये सारे टीन कनस्तर उनकी तमाम पुंजी थी। आज भी और शायद पिछले दिनों मे भी। इस घेरे के बगल मे ही एक नर कंकाल सॉवला सा आदमी दो ईटों के बीच लकड़ियों मे आग दे रहा था। उसके पूरे बदन पर मात्र एक लाल रंग की फटी अॅगोछी थी। रह रहकर वो अपनी अॅतड़ियॉ दबाए उठंग कर लकड़ियों मे लगी कमजोर आग को अपनी फूॅक से जगाने का प्रयास करता. दो चार चिन्गारियॉ छिंटकती. एक हल्का सा धुॅआ प्लेटफॉर्म पर फैल जाता था। फिर वो मिनटों तक खॉसता रहता था और अपनी ऑखों मे आए कीचड़ से सने ऑसुओं को अपने अॅगोछी की एक छोर से साफ करता रहता था। रह रहकर वो अपनी नकियाती आवाज मे गरियाता भी रहता था. . जर तोहरी महतारी के. जर जा ए बुजरो वाली. . ःअरे!जल भी जाओ न!

नलके के नीचे एक सॉवली सी दुबली पतली औरत कपड़े धोने वाले साबुन से अपने बाल और अपने चेहरे धो रही थी। साबुन की पीली टिकिया घिस घिस कर पापड़ की तरह एकदम से पतली हो चली थी। उसके बालों या बदन पर मुझे गाज या फेन तो कहीं न दिख रहा था. फिर भी वो इसे यहॉ वहॉ फिराये जा रही थी। रह रहकर वो अपने मरद की ओर देखकर मुस्कियाती रहती थी. जो अभीं तक अपनी अॅतड़िया पकड़े आग सुलगाने मे लगा था। आग जलने का नाम तक न ले रही थी। गरिया गरिया कर वो भी थक चला था। अब वो अपनी पत्नी को डपटाःअब दिन भर सिंगारे करबू का!इ ससुरी आग हमरे बस क ना ह। आके जरावा ना कि आज भूक्खे सूत्ते के भेजबू !ःआज दिन भर श्रृंगार ही करना है क्या!ये आग मेरे वश की नही है। आके जलाओ इसे या आज भूखे ही सोने भेजोगी!ः

उसकी पत्नी अपने खुले नंगे भींगे बालों मे फाकट से होकर अपने घर आई. और अपनी गन्दी चिपचिपी साड़ी के पल्ले से अपना चेहरा पोंछकर अपने बाल सुखाने लगी। मर्द भिन्नाया नलके पर जाकर अपना सर नलके के नीचे कर दिया। फिर मिनटों साबुन की टिकिया अपनी कॉखो मे फेरता रहा। तभी मेरी नजर उसके दॉये हॉथ पर पड़ी. जिसके तीन उॅगलियों पर गमछे की फाड़ी पट्टियों का बैन्डेज चढा था। वो कोढ का मरीज था। उसकी पत्नी बक्से से एक चनका फ्रेमदार आईना निकाल कर एक कनस्तर पर टिका कर गुलाबी रंग के कंघे से अपने बाल पीछे की ओर झाड़े जा रही थी . और टूटे बालो को कंघे से निकाल कर उनके गोले बना रही थी। बाल झाड़ लेने के बाद बीच से मॉग काढ कर अपने कंघे के एक छोर से मुट्ठी भर सिन्दूर अपनी मॉग मे फैलाने लगी। उसका पति उसके भींगे पल्ले से अपना चेहरा और बाल पोंछे जा रहा था।

प्लेटफार्म पर उतनी भींड़ न थी. पर यदा कदा एकाध याजी इस घर के दॉये बॉये रूकते ठहरते. फिर मुस्करा कर आगे बढ जाते। मै इनकी गतिविधियों का एकमात्र अविराम दर्शक था। ऑखों के सामने फिल्मी कलियॉ टिकाये इनकी एक एक हरकत मै देखे जा रहा था और सोचे जा रहा था कि दीवारों और छतों के बन्द घरों मे एक पति पत्नी का जीवन इन कनस्तरों से घिरे बिना छत के घर से बहुत ज्यादे अलग तो न होता होगा।

कनस्तर पर टिके आईने मे ये मरद बार बार अपना चेहरा कभीं दॉये से कभीं बॉये से देख देख कर अपनी दो उॅगलियों मे उसी गुलाबी टूटे कंघे को फॅसाए अपने बाल सॅवारे जा रहा था। उसकी पत्नी दो चार सूखे आलू छील रही थी। एक अल्यूमिनियम की थरिया मे एक बैगन कटा पड़ा था। आलू काट कर वो एक कनस्तर मे कुछ ढूॅढने लग पड़ी। उसे एक छोटा सा प्याज मिल भी गया। मरद एक कोने मे उॅठगाः. तनि आपन हॅथवा तेज चलावा न . नहइले धोले के बाद केतना सबर करवइबू!ःजरा अपने हॉथ तेज चलाओ न। नहाने धोने के बाद और कितना सब्र करवाओगी!ःकिसी मंत्र की तरह दुहराये जा रहा था। सब्जी काट कूट कर उसकी पत्नी एक दूसरे कनस्तर से ऑटा खरोच रही थी। ऑटा भी खत्म हो चला था। ऑटा गूथने के बाद मात्र पॉच छोटी लोइया बन पाई थी।

पता नही ये कितने दिनो से गुआहाटी मे थे!पैसे भी इनके पास शायद ही होंगे! इनके न सिर्फ कनस्तर खाली हो चले थे. बल्कि कड़वा तेल की शीशी मे भी मात्र चार पॉच बूॅद ही तेल शेष बचा था। इनका न सिर्फ आने वाला कल भयावह था. इनका पूरा भविष्य भी कहरों व कोहरों से भरा हुआ था . जिनकी कम से कम इन्हे रत्ती भर भी परवाह न थी। मरद इत्मीनान से पॉव पर पॉव धरे खाने का इन्तजार कर रहा था और पत्नी पूरी तन्मयता से एक कराही मे आलू और बैगन की सब्जी भूने जा रही थी। नमक मिर्च और मसालों की पुड़ियायें भी खत्म हो चली थीं। मुझे ऐसा लग रहा था कि ये इनका

या इस तरह का आखिरी खाना है। कल के नाम पर इनके पास खाली कनस्तरों और बर्त्तनो के सिवाय शायद कुछ न था। आलू बैगन की रसेदार सब्जी बन चली थी। मरद फाकट पर एक बोरी पर रसोई की तरफ टकटकी बॉधे बैठा था। उसके सामने एक अल्यूमिनियम की थरिया और पानी से लबालब भरा एक लोटा था। चूल्हे से कराही के नीचे उतरते ही वो आधी से भी ज्यादे सब्जी अपनी थरिया मे डाल लिया और बिना रोटी का इन्तजार किये ही सुड़क सुड़क कर सब्जी खाना शुरू कर दिया। सब्जी थोड़ी तेज बनी थी। रह रह कर वो लोटे से गटागट पानी पीये जा रहा था। अब उसे पहली रोटी मिली. जिसे वो एक ही कौर मे रस्से मे भिंगोकर निगल गया। अब वो अपनी चौथी रोटी से अपनी थरिया चमका रहा था। उसका पेट तो भरा न था. पर वो भी क्या करता! आखिर उसकी पत्नी भी तो दिन भर से भूखी बैठी थी। शेष भूख वो नलके पर खड़ा होकर गटागट पानी पीकर बुझा रहा था। उसकी ही थरिया मे शेष सब्जी डालकर अब उसकी पत्नी आखिरी रोटी ले कर खाने बैठी। अपने पल्ले से उसने ओट कर रखा था। उसके सामने पानी से भरा लोटा पटक कर अपनी नकियाती आवाज मे मरद भुनभुनाए जा रहा थाःआज क खाना मे केतना मरचा झोंकले रहलू! इ हिचकी ससुरी जातै ना ह।ःआज के खाने मे कितना मिर्च झोंक मारी थी!ये हिचकी जाने का नाम ही नही ले रही हैःचूल्हे के ईटो को एक तरफ टिका कर वो अपने नंगे पैरों से जली अधजली लकड़ियॉ व राखें प्लेटफार्म के नीचे धकेले जा रहा था। उसकी पत्नी जूठे बर्त्तन नलके पर उसी साबुन की पतली टिकिया से मॉजे जा रही थी।

हल्का हल्का अँधेरा छाने को आया था. फिर भी प्लेटफार्म पर पर्याप्त रोशनी थी। कितनी ट्रेने इस दरम्यान आई और गई. हजारो यात्री उनमे चढे. उनसे उतरे. पर मेरा ध्यान बस इसी गृहस्थी पर टिका रहा। ट्रेनो के आने पर प्लेटफार्म पर भागा दौड़ी मच जाती थी। कई बार तो कुली या यात्री ठोकर मारकर कनस्तरो की दीवार तक तोड़ देते थे. जिन्हे वो भीड़ के छँटते ही अपनी जगह पर टिका देते थे। अपने घर का एक मिलिमीटर तक ये छोड़ने या देने को तैयार न थे। इस गृहस्थी के ईर्द गिर्द समय जैसे थम सा गया था. समीप लटके प्लेटफार्म के घड़ी की नाई। मँजे थरिया लोटे को अपने ऑचल से पोंछ पॉछ कर उन्हे एक कनस्तर मे सहेज कर पत्नी ने बक्से से एक फटी गन्दी मटमैली भागलपुरी चादर निकाली। एक कोने मे वो घुटने समेट कर अपने बदन पर चादर डाल कर लेट गई। उसकी पीठ मेरी तरफ थी। उसका मरद उसके बगल मे बैठा अपनी दो उँगलियों के बीच फँसी आधी बिड़ी के कश पर कश खींचे जा रहा था। अचानक उसकी खॉसी भड़की। बिड़ी लाईनो पर फेंक कर वो मिनटों तक खॉसता रहा. फिर उठ खड़ा हुआ और प्लेटफार्म के किनारे पर जाकर खँखार खँखार कर लाईनो पर थूकता रहा।

अचानक प्लेटफार्म नम्बर एक पर भगदड़ मची। दो रेलवे के कर्मचारी वहॉ एक मोटी पाईप बिछा रहे थे। प्लेटफार्म पर के भिखमंगे व बेघर अपना बोरिया बिस्तर बॉधने मे लगे थे। इसके पहले कि पाईप की मोटी धार बजाय फर्श के उन पर पड़ती. वो सरक लिये। इस पाईप की मोटी धार से न सिर्फ प्लेटफार्म साफ किया जाता था. बल्कि वहॉ बसे बेघर भिखमंगे भी खदेड़े जाते थे। ये रोज का नियम था. जो कई बार दुहराया जाता था। पर तमाम रोक थामो के बावजूद इन पाईप वालों के जाते ही पता नही किन रास्तों से ये भिखमंगे प्लेटफार्मो पर आ धमकते थे. और भींगे फर्शो पर ही अपनी चिथड़ी गुथड़ी फैलाने लगते थे। मेरे सामने वाली गृहस्थी अप्रभावित डटी हुई थी। इतना ही नही. मरद घेरे मे आकर अपनी पत्नी की आधी चादर चुराकर उसके बगल मे लेट गया. और सिर तक चादर तान ली। वो अपनी पत्नी की कान मे कुछ भुनभुनाये भी जा रहा था। रह रहकर चादर के नीचे उसके पत्नी का सिर डोलता और एक उँगली मेरी ओर उठती। एक बार तो उसका मरद चादर से मुँह निकाल कर मुझे जलती ऑखो से घूरा भी। मै झट से फिल्मी कलियॉ के उसी पन्ने पर अपनी ऑखे गड़ा दिया. जिस पर घन्टो से अपनी ऑखे गड़ाये बैठा था। पत्नी ने करवट बदली। उसे अपना आखिरी दायित्व तो निभाना ही था। अपने मरद को वो कैसे टाल देती! परम्परागत पहले भोजन फिर...। प्लेटफार्म की पर्याप्त रोशनी व अन्यान्य यात्रियों के बावजूद इस फटी चादर के नीचे दो शरीर एक दूसरे से जा चिपटे।

पाईप वाले प्लेटफार्म नम्बर छ धो चुके थे। अब वो प्लेटफार्म सात और आठ धोने की तैयारी कर रहे थे। मरद प्लेटफार्म छ और सात के बीच नीचे लाईनो पर जा खड़ा हुआ। उसकी पत्नी उसे धड़ाधड़ कनस्तरे पकड़ाती जाती जिन्हे वो धुले प्लेटफार्म छ पर सुरक्षित पहुँचा देता था। सारे कनस्तर अब प्लेटफार्म छ पर थे. मात्र एक बक्सा बचा था। तभी एक ट्रेन प्लेटफार्म छ पर आई। मरद छलांग मारकर प्लेटफार्म पर चढ गया।

पाईप की मोटी धार सबसे पहले इस पत्नी पर पड़ी और पड़ती रही। वो अपना चेहरा एक हॉथ की ओट मे किये नहाती रही। उसका एक हॉथ अपने सीने पर था. जहॉ पर पाईप की धार अक्सर पड़ती थी। पाईप वाले बस उसी से मिनटो तक खेलते रहे। वो नीरिह निःशब्द लाचार बेवश खड़ी रही। उसके सामने उसका बक्सा खुला औंधा पड़ा था। सिन्दूरदानी समीप ही लुढकी पड़ी थी. जिसका सिन्दूर पता नही आसाम की किस मॉग मे वह रहा था! प्लेटफार्म छ की ट्रेन पन्द्रह मिनट तक रूकी रही। उसके चले जाने के बाद प्लेटफार्म छ का दृश्य कुछ ज्यादे ही विभत्स था। एक पुलिस कान्सटेवल उसके मरद की पीठ पर डंडे बरसाये जा रहा था और अपनी बूटों से इस गृहस्थी के सारे कनस्तरों के पतरे बनाये जा रहा था। इस असमिये कान्सटेवल की ऑखे तिब्वतियों या विएतनामियो की तरह खींची हुई थीं। ऐसी खीचे ऑखो वाले लोग स्वभावतः क्रूर होते हैं। इस गरीब के आर्त्तनाद से पूरा प्लेटफार्म गूँज रहा था। थोड़ी सी भींड़ भी वहॉ जमा हो गई थी। बेचारा अपना हॉथ जोड़े डंडे पर डंडे खाए जा रहा था। पत्नी से ये सब कुछ देखा न गया। वो धम्म से जमीन पर बैठ गई और अपने हॉथ प्लेटफार्म पर पटक पटक कर रोने लग पड़ीःइ कवन स जालीम देस ह. अरे उनकर जान त बकस दा ःये कौन सा जालिम देश है! अरे उनकी जान तो वख्श दोःदोगला. चोर. पापी और पता नही कौन कौन सी गालियॉ वो उस कान्सटेवल को दिये जा रही थी। उसके मरद की पीठ पर अभी भी डंडे बरस रहे थे। वो भागने तक की हालत मे न था।

जब ये कान्सटेवल उसका हॉथ पकड़े सीढियों की तरफ बढा. तब उसकी पत्नी अपना बक्सा प्लेटफार्म पर ही छोड़कर तीर की तरह भागी। पुल पर वो हॉथ जोड़े कान्सटेवल के पैरों पर गिर पड़ी। वो उसका झोंटा पकड़ कर एक तरफ झटक दिया। वो रोती कलपती दया की भीख मॉगते हुए एक दो डंडे भी खाई। इन दोनो को स्टेशन से बाहर खदेड़ कर ये कान्सटेवल दुबारा एक दूसरे के साथ प्लेटफार्म नः आठ पर आया. जहॉ बक्से के दूसरे सामान इधर उधर बिखरे पड़े थे। एक टूटी कन्घी. एक टूटा आईना. प्लास्टिक टिकूलियों का एक पैकेट. एक गन्दे रूमाल की पोटली. शिव पार्वती की एक छोटी मढी फोटो. एकाध साड़ी या फिर इसी तरह के दूसरे सामान। ये दोनो कान्सटेवल्स अपनी बूटों से ठोकर मार मार कर सारा सामान प्लेटफार्म के दूसरी तरफ फेके जा रहे थे।

प्लेटफार्म धुल गया था। बड़े बुझे मन से मै उठा. स्टेशन के बाहर आया और एक रेस्त्रॉ मे खाने बैठा। एकाध कौर से ज्यादे मुझसे खाया न गया। लॉक

रूम से अपना सूटकेस वापस लेकर मै प्लेटफार्म आठ पर वापस आया। याञियों की भींड़ बढ रही थी. फिर भी मुझे वहॉ नीरवता ही नीरवता दिख रही थी। ठीक सामने के कोने मे एक बसा बसाया गॉव था. जो एक बाढ की चपेट मे आ गया था। जहॉ तक मेरी नजर जा सकती थी. मुझे सिर्फ पानी ही पानी दिखता था।

मेरी ट्रेन के आने का समय नजदीक आता जा रहा था। नियत समय पर मेरी ट्रेन आई। मै अपने डिब्बे मे आकर खिड़की की तरफ एक सीट पर जा बैठा। खिड़की खोलकर मै प्लेटफार्म के उसी कोने को देखे जा रहा था। इस बाढ के बगैर या इस बाढ के बाद इस गृहस्थी का कल मेरे लिए एक ही समान भयावह था. जिनकी इन्हे रत्ती भर भी परवाह न थी। फिर कल की ये परवाह भी क्यों करते!अविदीत तो अविदीत ही है। परवाह करके हम उसे विदीत तो नही बना सकते।

मेरी ट्रेन अभी भी रूकी हुई थी. तभी ये अचानक मुझे प्लेटफार्म पर आते दिखे। पत्नी अपने मरद को अपने हॉथो से सम्हाले धीरे धीरे चल रही थी। ये आकर मेरे ही बेंच पर बैठ गए। पत्नी का चेहरा सूजा हुआ था. पति की पूरी पीठ लहू लुहान थी। पत्नी अपना पल्ला अपने मुॅह मे ठूॅसे उसे अपनी सॉसो से गरम कर रही थी। जैसे ही वो अपने पल्ले का गोला अपने मरद की पीठ पर रखी. वो भों भों कर के रोने लग पड़ा। पत्नी झट से उसे भींच कर राग पा कर रोने लग पड़ीःः

प्र्मोद कुमार सिंह